अपादान कारक-पञ्चमी

ध्रुवमपायेऽपादानम् । अपादाने पञ्चमी।

जिससे कोई वस्तु पृथक् (अलग) हो, उसे अपादान कहते हैं। अपादान में पञ्चमी होती है, यथा- वृक्षात् पत्राणि पतन्ति (पेड़ से पत्ते गिरते हैं।) यहाँ पर पत्ते पेड़ से अलग हो रहे है। इसी प्रकार 'ग्रामाद् आयाति' यहाँ पर ग्राम से वियोग या पृथकत्व पाया जाता है, क्योंकि आने वाला पुरुष गाँव से अलग हो रहा है। अतः पेड़ और 'ग्राम' अपादान हुए और अपादान में पञ्चमी होती है। यदि अपादान में पृथक्करण का भाव न हो तो तो पञ्चमी नहीं होती, जैसे "कां बेलां त्वामन्वेष्यामि" (कितने समय से मैं तुम्हें हूँढ रहा हूँ।) यहाँ पर 'बेला' अवधि नहीं है, अन्वेषण क्रिया से व्याप्तकाल है, अतः 'अत्यन्त संयोग' में द्वितीया हुई है। इसी प्रकार "वृक्षशाखासु अवलम्बन्ते मुनीनां वासांसि" (मुनियों के वस्त्र वृक्ष की से लटक रहे है।) यहाँ पर वृक्षशाखा अपादान कारक नहीं, अपितु अधिकरण कारक' (वस्त्रों की अवलम्बन क्रिया का आधार) है।

भीत्रार्थानां भयहेतुः

भय और रक्षा के अर्थवाली धातुओं के साथ भय के कारण में पञ्चमी होती है, यथा-असज्जनात् कस्य भयं न जायते । बालकः सिंहात् बिभेति ।

जुगुप्साविरामप्रमादार्थानामुपसंख्यानम् वा०

जुगुप्सा (घृणा), विराम (बन्द होना, हटना), प्रमाद (भूल, असावधानी) अथवा इनके समानार्थक शब्दों के साथ पञ्चमी होती है, यथा-

पापात् जुगुप्सते, विरमति वा ।

न निश्चयार्थात् विरमन्ति धीराः ।

न नवः प्रभुराफलोदयात् स्थिरकर्मा विरराम कर्मणः

(वह नया राजा तब तक कम करने से न हटा जब तक उसे फलप्राप्ति न हो गयी।

धर्मात् प्रमाद्यति (धर्म कार्य में भूल करता है।)

विशेष-जिसके विषय में भूल या असावधानी होती है, उसमें सप्तमी का प्रयोग भी होता है,

यथा-न प्रमाद्यन्ति प्रमदासु विपश्चित:।

वारणार्थानामीप्सितः

जिस वस्तु से किसी को हटाया जाय, उसमें पञ्चमी होती है,

यथा-यवेभ्यो गां वारयति क्षेत्रे (खेत में जौ से गौ को हटाता है।)

गुरुः शिष्यं पापात् वारयति ।

इन दो उदाहरणों में रोकनेवाले की इच्छा जो बचाने की और पाप से हटाने की है, अतः जौ और पाप अपादान कारक हुए।

आख्यातोपयोगे

जिससे विद्या नियमपूर्वक पढ़ी जाय या मालूम की जाय वह गुरु या अध्यापक आदि अपादान होता है, यथा

उपाध्यायात् अधीते (उपाध्याय से पढ़ता है)।

कौशिकात् विदितशापया--- (विश्वामित्र से श्राप जान कर उसने----)।

तेभ्योऽधिगन्तुं निगमान्तविद्यां वाल्मीकिपार्श्वादिह पर्यटामि (उत्तरे)

(उन लोगों से वेद पढ़ने के लिए मैं वाल्मीकि के यहाँ से इस स्थान पर चला आया हूँ।

नियम न होने पर षष्ठी का प्रयोग होगा, यथा-नटस्य गाथां शृणोति ।

पराजेरसोढः

परापूर्वक √जि धातु के प्रयोग में जो असह्य होता है उस की अपादान संज्ञा होती है,

यथा-अध्ययनात् पराजयते (वह अध्ययन से भागता है।)

उसके लिए अध्ययन असह्य या कष्टप्रद है। परन्तु हराने के अर्थ में द्वितीया होती है, यथा-शत्रून् पराजयते ।

अन्तर्धौ येनादर्शनमिच्छति

जब कोई अपने को छिपाता है तब जिससे छिपाता है वह अपादान होता है,

यथा-मातुर्निलीयते कृष्णः (कृष्ण माता से छिपाता है)।

कृष्ण अपने को माता से छिपाता है, अतः माता अपादान कारक हुआ।

जनिकर्तुः प्रकृतिः

√जन् धातु के कर्ता का मूल कारण अपादान होता है,

यथा-ब्रह्मणः प्रजाः प्रजायन्ते (ब्रह्माजी से समस्त प्रजा उत्पन्न होती है)।

यहाँ 'प्रजायन्ते' का कर्ता 'प्रजाः' है और उस कर्ता (प्रजाः) का मूल कारण 'ब्रह्मा' है, अतः 'ब्रह्मा अपादान हुआ। इसी प्रकार- कामात् क्रोधोऽभिजायते।

परन्तु जिससे कोई उत्पन्न होता है, उसमें प्रायः सप्तमी होती है,